दैनिक जागरण

हर बुरे अनुभव से भी एक अच्छी सीख मिलती है

फैसले की प्रतीक्षा

अयोध्या मामले की सुनवाई तय समय में पूरी होने के साथ ही सदियों पुराने इस विवाद के समाधान की उम्मीद बढ़ गई है। चूंकि इस मामले की सुनवाई कर रही संविधान पीठ में शामिल प्रधान न्यायाधीश 17 नवंबर को सेवानिवृत हो रहे हैं इसलिए इसके पहले फैसला आना है। इस मामले में फैसला कुछ भी हो, इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि एक समय यह धारणा बन रही थी कि सुप्रीम कोर्ट राजनीतिक एवं सामाजिक रूप से संवेदनशील इस प्रकरण की सुनवाई करने से बचना चाह रहा है। लंबे इंतजार के बाद सुप्रीम कोर्ट ने इस धारणा को दूर करते हुए इस मामले की सुनवाई करने का फैसला किया और उसने दिन-प्रतिदिन सुनवाई की। राष्ट्रीय महत्व के मामलों की सुनवाई में ऐसी ही तत्परता का परिचय दिया जाना चाहिए, क्योंकि एक बड़ी संख्या में लोग फैसले की प्रतीक्षा कर रहे होते हैं। इस मामले में तो फैसले का इंतजार पूरा देश ही कर रहा है।

बेहतर तो यह होता कि अयोध्या मामला अदालत की चौखट तक आता ही नहीं, लेकिन जब आपसी बातचीत से मामले को सुलझाने की कोशिश नाकाम रही तब फिर इसके अलावा और कोई उपाय नहीं रह गया था कि अदालत अपना फैसला सुनाए। भले ही दुनिया की नजर में यह मामला जमीन के एक टुकड़े के मालिकाना हक की लड़ाई हो, लेकिन सच्चाई यह है कि यह आस्था से जुड़ा सवाल भी है। वैसे तो अदालतें आस्था से जुड़े मामलों का फैसला आसानी से नहीं कर सकतीं, लेकिन सौभाग्य से इस मामले में ऐसे साक्ष्य उपलब्ध हैं जो फैसले को दिशा देने का काम करेंगे। इनमें सबसे उल्लेखनीय है पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग की वह रिपोर्ट जो अयोध्या में विवादित स्थल पर किए गए उत्खनन पर आधारित है। इसके अलावा अन्य अनेक महत्वपूर्ण साक्ष्य भी हैं। अब जब यह स्पष्ट है कि सुप्रीम कोर्ट का फैसला इन्हीं साक्ष्यों पर आधारित होगा तब फिर सभी पक्षों को उसका सम्मान करने के लिए तैयार रहना चाहिए। उचित यह होगा कि दोनों पक्ष इसके लिए माहौल बनाएं कि जो भी फैसला आए उसे सभी स्वीकार करें। पूरे देश का ध्यान खींचने वाले अयोध्या मामले की सुनवाई के दौरान दोनों पक्षों की ओर जो तमाम दलीलें दी गईं उनसे यह तो संकेत मिला कि कौन कितने मजबूत धरातल पर है, लेकिन उनके आधार पर निष्कर्ष निकालकर अपने-अपने पक्ष में दावे करने का कोई मतलब नहीं। यह समय किसी भी तरह की दावेदारी जताने का नहीं, बल्कि यह सुनिश्चित करने का है कि सुप्रीम कोर्ट के फैसले का सम्मान हो। निःसंदेह यह सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी उनकी अधिक है जो अयोध्या मामले की सुनवाई से जुड़े रहे हैं।

मजदूरों की सुध जरूरी

देश की अग्रणी कंपनियों में शुमार है कोल इंडिया। इसी की यूनिट है भारत कोकिंग कोल लिमिटेड यानी बीसीसीएल। धनबाद कोयलांचल में कोयला खनन कर देश को ऊर्जा देने का काम इस कंपनी के जिम्मे है। बीसीसीएल में काम करने के लिए पूरे देश के विभिन्न प्रांतों से आए कर्मी और अधिकारी अपना खून पसीना जलाकर कोयला उत्पादन करते हैं। बावजूद इस कंपनी के मजदूरों को जो सुविधाएं मिलनी चाहिए वे उन्हें मयस्सर नहीं हो रही हैं। यह बात इस नामचीन कंपनी की व्यवस्था पर सवाल उठाती है। और सवाल उठे भी क्यों नहीं, हाल ही में बीसीसीएल के लोदना क्षेत्र के भागा दो नंबर में एक दो मंजिला भवन गिर गया। इसमें चार परिवारों के आवास थे। इस हादसे में एक सेवानिवृत्त महिला कोयलाकर्मी की जान चली गई। हैरत इस बात की है कि इस जर्जर भवन की मरम्मत के लिए यहां रहने वाले परिवार कई बार गुहार लगा चुके थे। उनको हमेशा इस बात का भय रहता था कि कहीं भवन ढह न जाए। और, अंततः वही हो गया। दुख की बात यह भी है कि जिनपर सुरक्षा का जिम्मा है, उनकी ही लापरवाही के कारण एक इंसानी जीवन मलबे में दबकर खत्म हो गया। करीब 46 वर्ष पहले कोयला उद्योग का राष्ट्रीयकरण हुआ था। घुट-घुट कर जी रहे मजदूरों को आस बंधी थी कि उनके जीवन स्तर में सुधार आएगा। बावजूद हालात बेहद भयावह हैं। झरिया इलाके में आज भी हजारों कोलकर्मी आग के बीच बने मकानों में रह रहे हैं। कुछ वर्ष पहले घनुडीह में भूमिगत आग के कारण जमीन धंसने से कई मकान क्षतिग्रस्त हुए थे। उस समय भी एक कोलकर्मी की मां की मौत हो गई थी। बावजूद जर्जर भवन और भूमिगत आग के बीच रह रहे कर्मियों का पुनर्वास बीसीसीएल प्रबंधन नहीं कर सका। इन इलाकों में पेयजल का भी गंभीर संकट है। कई इलाकों में लोग आज भी कुएं एवं जोड़िया के पानी पर निर्भर हैं जो पीने लायक नहीं। मगर उसका उपयोग करने की मजबूरी है। इन अव्यवस्थाओं की तरफ ध्यान जाना चाहिए और कोल कंपनी को अपनी प्रतिष्ठा के अनुरूप अपने मजदूरों को सुविधाएं देनी चाहिए। ऐसा हुआ तो मजदूर भी उत्साह से काम करेंगे और कंपनी का उत्पादन बढ़ेगा।

कोयलाकर्मियों को कंपनी को बेहतर सुविधा देनी चाहिए। उनकी जान खतरे में बनी रहती है, यह अच्छी बात नहीं है

प्रभावी विपक्ष में बाधा बनी कांग्रेस

प्रदीप सिंह

नेहरू–गांधी परिवार कांग्रेस के लिए बोझ बन गया है। इसकी वजह से कांग्रेस पार्टी विपक्ष की राजनीति के लिए बोझ बन गई है

खेत की रक्षा के लिए बाड़ लगाई जाती है, पर वही बाड़ यदि खेत खाने लगे तो क्या किया जाए? किसी भी किसान से पूछिए वह कहेगा कि उसे फौरन काट देना चाहिए। नेहरू-गांधी परिवार कांग्रेस के खेत की वही बाड़ है जो अब खेत खा रही है। समस्या यह है कि इस किसान (कांग्रेस) को बाड़ से प्रेम हो गया है। वह बाड़ को बचाने के लिए फसल की बलि देने को तैयार है। इसका परिणाम दिखना शुरू हो गया है। परिवार की साख खत्म हो चुकी है और पार्टी अंतः विस्फोट का शिकार हो गई है। लोग पार्टी छोड़ रहे हैं। जो अभी तक बने हुए हैं, वे पार्टी के प्रेम के कारण नहीं, बल्कि इसलिए टिके हैं कि उन्हें आगे का रास्ता नहीं सूझ रहा। आजादी के 72 साल में संसद के भीतर और बाहर विपक्ष इतना दयनीय कभी नहीं रहा। ऐसा लग रहा है कि विपक्ष का कुतुबनामा यानी दिशासूचक यंत्र खो गया है। इसलिए सब एक ही जगह पर गोल-गोल घूम रहे हैं। कांग्रेस के नेता और कार्यकर्ता पिछले छह-सात दशकों से जिस सूरज की रोशनी में दमक रहे थे, उस सूरज को ही ग्रहण लग गया है। महाराष्ट्र और हरियाणा में विधानसभा चुनाव हो रहे हैं। चुनाव प्रचार और पार्टी संगठन की हालत देखकर यह पता लगाना कठिन है कि पार्टी अपनी मुख्य प्रतिद्वंद्वी भाजपा से लड़ रही है या आपस में? लोकसभा चुनाव के समय से शुरू हुआ कांग्रेस छोड़ने वालों का सिलसिला रुकने का नाम ही नहीं ले रहा। नेतृत्व को इसकी कोई चिंता है, ऐसा दिखता नहीं।

कांग्रेस इस समय तीन स्वतंत्र द्वीपों में बंट गई है। इनके नाम हैं सोनिया, राहुल और प्रियंका। आप चाहें तो इन्हें द्वीप के बजाय गणराज्य भी कह सकते हैं। काफी समय से यह लड़ाई परिवार के अंदर चल रही थी। अब खुले में आ गई है। तीनों एक दूसरे के खिलाफ कुछ नहीं बोलते, पर शायद एक-दूसरे की सुनते भी नहीं। उनके गण जरूर बोल रहे हैं और क्या खुलकर बोल रहे हैं। अशोक तंवर और संजय निरुपम खुलेआम बोल रहे हैं कि राहुल गांधी के लोगों को निशाना बनाया जा रहा है। सोनिया गांधी और प्रियंका खामोश हैं।

राहुल गांधी को कांग्रेस कार्यकर्ताओं में अपने प्रति अरुचि पैदा करने में करीब 15 साल लग गए। प्रियंका गांधी ने यह कारनामा आठ महीने में ही कर दिखाया। आप उत्तर प्रदेश के कांग्रेसियों से पूछ लीजिए। ताजा उदाहरण कालाकांकर के दिनेश सिंह की बेटी रत्ना सिंह का है। तीन बार की सांसद रत्ना प्रियंका के रवैये से परेशान होकर मंगलवार को भाजपा में शामिल हो गईं। प्रियंका इस साल फरवरी में राजनीतिक रूप से सक्रिय हुईं तो संकेत दिया कि कांग्रेस अब कम से कम उत्तर प्रदेश में जमीन पर दिखेगी। पिछले आठ महीने में एक दो अवसरों को छोड़कर वह ट्विटर पर ही अधिक नजर आती हैं। उनके ट्वीट पढ़कर उनकी राजनीतिक अपरिपक्वता का ही नहीं, बल्कि उनकी अज्ञानता के स्तर का भी पता चलता है। सोनिया गांधी ट्विटर या किसी सोशल मीडिया मंच पर हैं ही नहीं। वह दिन दूर नहीं लगता जब कांग्रेस पार्टी सिर्फ सोशल मीडिया के जरिये चलने वाली पार्टी बनकर रह जाएगी। कांग्रेस के लिए समय 2004 में ठहर गया है। गांधी परिवार सहित तमाम कांग्रेसियों को लगता है कि कुछ करने की जरूरत ही नहीं, यहां भाजपा गलती करेगी और वहां मतदाता हमारे गले में वरमाला डाल देगा।

अवधेश राजपूत

लोकसभा चुनाव में कांग्रेस की लगातार दूसरी बार दुर्गति हो चुकी है। लोकसभा चुनाव के बाद हो रहे दो राज्यों के विधानसभा चुनाव में पार्टी के पास अवसर था कि वह मैदान में कम से कम लड़ती हुई दिखती। चुनाव की अधिसूचना जारी होने के बाद पूर्व अध्यक्ष राहुल गांधी अज्ञात स्थान के लिए रवाना हो गए। कहा गया कि वह नाराज होकर गए हैं। किससे, यह पता नहीं, क्योंकि पार्टी अध्यक्ष तो उनकी मां ही हैं। चुनाव के ऐन मौके पर नेता का गायब होना वैसे ही है जैसे युद्ध के समय सेनापति का मैदान छोड़ना। प्रियंका अब पार्टी की राष्ट्रीय महासचिव हैं। उनके पास उत्तर प्रदेश का प्रभार है। हरियाणा और महाराष्ट्र में चुनाव प्रचार के लिए वह कहीं नहीं गईं। अब गईं नहीं या जाने नहीं दिया गया, यह बात परिवार के अलावा कोई जानता नहीं। उत्तर प्रदेश में 12 विधानसभा सीटों के लिए उपचुनाव हो रहा है। प्रियंका वहां भी चुनाव प्रचार के लिए नहीं गईं। चुनाव प्रचार के तीन दिन बचे हैं, लेकिन सोनिया गांधी भी कहीं चुनाव प्रचार के लिए नहीं गईं। राहुल हो-हल्ले के बाद देश लौटे और प्रचार के लिए मुंबई पहुंचे। उनके प्रिय और हाल तक मुंबई कांग्रेस के अध्यक्ष रहे संजय निरुपम सभा में नहीं गए।

जैसे हिंदी टीवी सीरियलों में अक्सर किसी न किसी पात्र की याद्दाश्त अटक जाती है, वैसा ही राहुल गांधी के साथ भी हो गया लगता है। चुनाव महाराष्ट्र विधानसभा का है। उन्होंने अपना भाषण वहीं से शुरू किया जहां लोकसभा चुनाव में खत्म किया था। वह अभी राफेल के मोहपाश से निकल नहीं पाए हैं। उन्हें पता ही नहीं है कि वह इस मुद्दे पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को घेर रहे हैं या खुद घिर रहे हैं? इस पर भी गौर करें कि सोनिया गांधी को अंतरिम अध्यक्ष बने दो महीने से ज्यादा हो गया है, लेकिन किसी को पता नहीं कि वह इस पद पर कब तक रहेंगी? भाजपा भी लोकसभा चुनाव लड़ी और कांग्रेस से कहीं ज्यादा ताकत से लड़ी। उसके राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह कह रहे हैं कि दिसंबर तक पार्टी के नए अध्यक्ष का चुनाव हो जाएगा। लोकसभा चुनाव में हार की जवाबदेही से राहुल को बचाने के लिए इस्तीफा दिलाया गया। कहलवाया गया कि नेहरू-गांधी परिवार का कोई व्यक्ति पार्टी अध्यक्ष नहीं बनेगा। जब लगा कि पार्टी तो इसके लिए तैयार है तो सोनिया गांधी के पुराने वफादार मैदान में उतरे और सोनिया गांधी को नए अध्यक्ष के चुनाव तक अंतरिम अध्यक्ष बनवा दिया गया। ऐसे में घी गिरा तो सही, लेकिन अपनी ही दाल में। यानी अध्यक्ष पद घर में ही रह गया।

साल 2014 के लोकसभा चुनाव के बाद से कांग्रेस कार्यकर्ताओं और समर्थकों को इंतजार था कि अब बदलाव होगा, तब बदलाव होगा। पर बदलाव की जितनी बात हो रही है उतनी ही यथास्थिति बनी हुई है। सोनिया गांधी और राहुल गांधी के अध्यक्ष रहते सारे बड़े फैसले परिवार की डाइनिंग टेबल पर होते थे। अब पूरी डाइनिंग टेबल ही उठकर कांग्रेस कार्यसमिति में आ गई है। अब परिवार की डाइनिंग टेबल और कार्यसमिति का अंतर खत्म हो गया है। नेहरू-गांधी परिवार कांग्रेस के लिए बोझ बन गया है। इसकी वजह से कांग्रेस पार्टी विपक्ष की राजनीति के लिए बोझ बन गई है। स्वस्थ जनतंत्र के लिए जरूरी है कि विपक्ष संख्या में भले ही कम हो, लेकिन प्रभावी हो। कांग्रेस के रहते यह संभव नहीं लगता।

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

ऐतिहासिक भूल के सौ साल

शंकर शरण

जिस समय गांधी जी भारत में खिलाफत आंदोलन चला रहे थे तब खुद तुर्क उसे खत्म करना चाह रहे थे

भारत में महात्मा गांधी का पहला बड़ा राजनीतिक अभियान खिलाफत आंदोलन में भाग लेना था। यह मुहिम कुछ भारतीय मुसलमानों द्वारा शुरू की गई थी। उद्देश्य था तुर्की में इस्लाम के खलीफा सुल्तान की गद्दी और उसका साम्राज्य बचाना। मई 1919 से खिलाफत सभाओं में गांधी जी के भाषण शुरू हुए। खिलाफतवादियों ने 17 अक्टूबर, 1919 को 'खिलाफत दिवस' मनाया। उसका गांधी जी ने खूब प्रचार किया था। दिल्ली में 23 नवंबर, 1919 को 'अखिल भारतीय खिलाफत कांफ्रेंस' हुई जिसकी अध्यक्षता गांधी जी ने की थी। इन सम्मेलनों में आंदोलन विस्तार की योजना बनी जिसमें सरकार द्वारा दी गई उपाधियां लौटाने, सरकारी नौकरियों का बहिष्कार करने और टैक्स न देने का आह्वान किया गया। ये आह्वान अपने यहां इतिहास के पाठों में पढ़े-पढ़ाए जाते हैं, मगर वह सब खिलाफत के लिए हुआ था। डॉ. आंबेडकर ने अपनी पुस्तक 'थॉट्स ऑन पाकिस्तान' (1940) में लिखा, 'सच्चाई यह है कि असहयोग आंदोलन का उद्गम खिलाफत आंदोलन से हुआ, न कि स्वराज्य के लिए कांग्रेसी आंदोलन से। खिलाफतवादियों ने तुर्की की सहायता के लिए इसे शुरू किया और कांग्रेस ने उसे खिलाफतवादियों की सहायता के लिए अपनाया। उसका मूल उद्देश्य स्वराज्य नहीं, बल्कि खिलाफत था और स्वराज्य का गौण उद्देश्य बनाकर उससे (बाद में) जोड़ दिया गया था, ताकि हिंदू भी उसमें भाग लें।' इसी प्रकार एनी बेसेंट के शब्दों में, 'खिलाफत-गांधी एक्सप्रेस' का तूफान चला। यह आंधी ऐसी चली कि कांग्रेस की पिछली परंपरा झटके में उड़ गई।

गांधी जी ने खिलाफत को 'मुसलमानों की गाय' कहकर हिंदुओं को प्रेरित किया। यानी जैसे हिंदू गाय पूजते हैं, उसी तरह मुसलमान अपने खलीफा को, जबकि मुस्लिम जगत में कहीं खिलाफत की परवाह न थी। अरब के मुसलमान तुर्की के खलीफा से मुक्ति चाहते थे। खुद तुर्क लोग 'खिलाफत' के भार से आजिज थे। यह स्वयं महान तुर्क नेता कमाल पाशा ने कहा था। उन्होंने ही पहले ऑटोमन-तुर्क सल्तनत और फिर खिलाफत को 1924 में खत्म कर दिया। जब गांधी जी खिलाफत आंदोलन चला रहे थे, उसी समय तुर्क उसे खत्म कर रहे थे। खिलाफत के उद्देश्य समर्थन योग्य नहीं थे। तुर्की साम्राज्य बनाए रखने का मतलब था कई देशों को तुर्की का उपनिवेश बनाए रखना, पर गांधी जी ने यंग इंडिया (2 जून, 1920) में लिखा, 'मेरे विचार से तुर्की का दावा न केवल नैतिक एवं न्यायपूर्ण है, बल्कि पूर्णतः न्यायोचित है, क्योंकि तुर्की वही चाहता है जो उसका अपना है। गैर-मुस्लिम और गैर-तुर्की जातियां अपने संरक्षण के लिए जो गारंटी आवश्यक समझें, ले सकती हैं, ताकि तुर्की के आधिपत्य के अंतर्गत ईसाई अपना और अरब अपना स्वायत्त शासन चला सकें।' गांधी जी ने आगे लिखा, 'मैं यह विश्वास नहीं करता कि तुर्क निर्बल, अक्षम या क्रूर हैं।' यह भी गलत था, क्योंकि तुर्कों ने आर्मेनियाई जनसंहार (1915) किया था। उसमें दस-पंद्रह लाख आर्मेनियाई लोगों का तुर्कों ने सफाया किया। उन्हीं को गांधी जी दयालु कह रहे थे।

जिन्ना ने भी कहा कि खिलाफत 'पुराने जमाने' की चीज है और उसका साम्राज्य अब नहीं रह सकता। वैसी साम्राज्यवादी सत्ता बचाने में कुछ कठमुल्लों के साथ जुड़ जाना बहुत बड़ी भूल थी। चौरी-चौरा कांड के बहाने गांधी जी ने जब आंदोलन वापस लिया तो इसीलिए कि उन्हें वास्तविकता समझ आ गई थी। बहरहाल इस्लाम के लिए मुसलमानों में आवेश पैदा कर, उसमें हिंदुओं को झोंककर, 'एक साल में स्वराज' लेने का प्रलोभन देकर गांधी जी ने जो आंधी पैदा की, उससे समाज में गहरी दरार पड़ी। 'इस्लाम खतरे में' के नारे से मुसलमानों में 'काफिरों' के विरुद्ध जिहादी जोश भरा। फलतः मालाबार में अगस्त 1920 में हिंदुओं पर ऐसे हृदयविदारक अत्याचार किए गए कि डॉ. आंबेडकर के शब्दों में, 'समग्र दक्षिण भारत के हिंदुओं में भय की एक भयानक लहर दौड़ गई।' किंतु गांधी जी ने उन अत्याचारों की निंदा तो दूर, बल्कि प्रच्छन्न प्रशंसा की। उन्होंने कांग्रेस को भी मोपला अत्याचारों पर कोई ऐसा प्रस्ताव लेने से रोका, ताकि 'मुसलमानों की भावनाओं को आघात न पहुंचे।' कांग्रेस नेता और विद्वान केएम मुंशी के अनुसार अधिकांश नेता मानते थे कि गांधी जी एक गलत उद्देश्य के लिए अनैतिक काम कर रहे हैं जिससे बड़े पैमाने पर हिंसा होगी और सुशिक्षित हिंदू-मुस्लिमों की राजनीतिक भागीदारी घटेगी। जिन्ना ने भी गांधी जी को चेतावनी दी थी कि मुल्ले-मौलवियों को राजनीतिक मंच देकर वह बड़ी भूल कर रहे हैं। इस मसले पर लाला लाजपत राय, एनी बेसेंट, रवींद्रनाथ टैगोर, श्रीअरविंद आदि मनीषियों ने भी सार्वजनिक चिंता प्रकट की थी। मौलाना आजाद सुभानी जैसे मुस्लिम नेता अंग्रेजों से भी बड़ा दुश्मन '22 करोड़ हिंदुओं' को मानते थे।

स्वामी श्रद्धानंद ने एक खिलाफत सभा का विवरण दिया है जिसमें वह गांधी जी के साथ सम्मिलित हुए थे। उसमें मौलाना लोग बार-बार हिंसा का आह्वान कर रहे थे। स्वामी श्रद्धानंद के शब्दों में, 'जब मैंने खिलाफत आंदोलन के इस पहलू की ओर ध्यान दिलाया तो महात्मा जी मुस्कुराए और कहने लगे कि वह ब्रिटिश नौकरशाही की ओर इंगित कर रहे हैं। उत्तर में मैंने कहा कि यह सब तो अहिंसा के विचार का विनाश करने जैसा है और जब मुस्लिम मौलानाओं के मन में उलटी भावनाएं आ गई हैं तो उन्हें इस हिंसा का इस्तेमाल हिंदुओं के विरुद्ध करने से कोई रोक नहीं सकेगा।' आखिर वही हुआ। खिलाफत आंदोलन के दौरान और खिलाफत के खात्मे के बाद हिंदुओं को इस्लामी रोष का शिकार बनाया गया। स्टैनले वोलपार्ट ने 'जिन्ना ऑफ पाकिस्तान' (1984) में लिखा है कि खिलाफत के खात्मे पर पूरे भारत में जहां-तहां मुसलमानों ने हिंदुओं पर गुस्सा उतारा। हत्या, दुष्कर्म, जबरन धर्मांतरण, अंग-भंग और क्रूर अत्याचार किए। पूरे खिलाफत आंदोलन के दौर की परख करने पर आश्चर्य होता है कि गांधी जी के अहिंसा संबंधी दोहरेपन तथा खिलाफत आंदोलन की किस बड़े पैमाने पर लीपा-पोती हुई है। उस आंदोलन के दुष्परिणामों से देश आज तक पूरी तरह नहीं उबर सका है। इसीलिए अपने-अपने कारणों से यहां सभी राजनीतिक धाराएं उसकी चर्चा से बचती हैं। जबकि यह उस ऐतिहासिक आंदोलन का शताब्दी वर्ष है।

(लेखक राजनीतिक शास्त्र के प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

चिंताओं का शमन

इस नश्वर संसार में हर व्यक्ति किसी न किसी बात से परेशान रहता है, उसे कोई न कोई चिंता खाए रहती है। जीवन की छोटी-बड़ी घटनाओं से किसी न किसी रूप में वह हमेशा ही हलकान रहता है। आशय यह है कि मानव जीवन का परेशानियों और चिंताओं से ताल्लुकात शाश्वत है जो जन्म की पहली सांस से लेकर मृत्यु की अंतिम सांस तक अनवरत रूप से चलता रहता है।

महाभारत के एक प्रसंग में यक्ष ने युधिष्ठिर से एक प्रश्न पूछा था, 'वायु से भी अधिक तीव्र गति किसकी होती है?' युधिष्ठिर ने उत्तर दिया था कि मानव का मन हवा की गति से भी अधिक तेज दौड़ता है। मानव-मन से अधिक तीव्र गति इस संसार में किसी की भी नहीं हो सकती है, लेकिन युधिष्ठिर के इस उत्तर में एक अहम प्रश्न छुपा हुआ है। वह यह है कि मानव के मन की वायु से भी अधिक तेज गति के मूलभूत कारण क्या हैं? आखिर इसको पोषण और उत्प्रेरण कहां से प्राप्त होता है? इस प्रश्न के उत्तर के लिए हमें गंभीर आत्मविश्लेषण करने की जरूरत है। खुद की जीवनशैली और संस्कारों की बड़ी सूक्ष्मता से आत्म-मीमांसा की दरकार है। सच पूछिए तो मानव का मन इच्छाओं से इस कदर बंधा होता है कि मन में कोई इच्छा उठी नहीं कि यह लम्हा भर देरी किए बिना साध्य तक पहुंच जाता है।

इतना ही नहीं, इच्छाओं की लीला भी बड़ी गजब है। एक इच्छा पूरी हुई नहीं कि दूसरी उठ खड़ी होती है, तीसरी उठ खड़ी होती है और अनंत तक चलती रहती है। अर्थात चिंताओं से बचने के लिए मन पर नियंत्रण अनिवार्य है और यह कार्य आसान नहीं है। इसके लिए इच्छाओं को वशीभूत करना सबसे महत्वपूर्ण शर्त है। गौतम बुद्ध ने भी मानव इच्छाओं को ही सांसारिक दुखों और परेशानियों का सबब बताया था। लिहाजा यदि सात्विक और अपरिग्रह जीवनमूल्यों को अपनाकर इच्छाओं का दमन कर लिया जाए तो जीवन की परेशानियों और चिंताओं को सहज रूप से शमित किया जा सकता है। मन और इच्छाओं पर काबू पाकर ही जीवन को सही दिशा दी जा सकती है।

श्रीप्रकाश शर्मा

कब रुकेगी भ्रूणहत्या की कुरीति

मोनिका शर्मा

हाल ही में राजधानी दिल्ली में पुलिस और स्वास्थ्य विभाग की टीम द्वारा एक कॉल सेंटर पर छापा मारने पर एक दुखद और हैरान करने वाला सच सामने आया है। इस कॉल सेंटर में आइवीएफ के जरिये महिलाओं को शत-प्रतिशत बेटा पैदा करने की गारंटी दी जाती थी। मोटी रकम वसूलकर बच्चे के लिंग की जांच का इंतजाम किया जाता था। हमारे देश में लिंग परीक्षण के लिए कड़े कानून बने हुए हैं। ऐसे में इस अमानवीय धंधे से जुड़े लोगों ने महिलाओं को विदेश भेजकर लिंग परीक्षण करवाने की राह निकाल ली। महिलाओं को उन देशों में भेजा जाता था जहां गर्भ में पल रहे बच्चे का लिंग परीक्षण कराना गैर-कानूनी नहीं है। जांच में सामने आया है कि इस आइवीएफ सेंटर के माध्यम से महिलाओं को मनचाही संतान पाने के लिए दुबई, सिंगापुर और थाईलैंड जैसे देशों में भेजा जाता था। राष्ट्रीय स्तर पर जाल फैलाए इस रैकेट का देश भर में करीब 100 आइवीएफ केंद्रों के साथ जुड़ाव था। कहने को प्रगतिशील और बदलाव की राह पर आगे बढ़ रहे हमारे समाज में परंपराओं और रूढ़ियों की जकड़न देखिए कि इस कॉल सेंटर के माध्यम से परीक्षण के लिए अभी तक करीब 6 लाख लोगों को विदेशों में भेजा जा चुका है। अफसोस कि देश में बेटियों को बचाने और पढ़ाने की मुहीम तो चलाई जा रही है, पर उनकी स्वीकार्यता आज भी पुरातनपंथी सोच के बोझ तले ही दबी है। ऐसे हालात तब हैं जब लिंगानुपात राष्ट्रीय स्तर पर चिंता का विषय बना हुआ है। राष्ट्रीय औसत के अनुसार देश में प्रति 1000 लड़कों के पीछे 943 लड़कियां हैं।

जिस समाज में बेटियों को दुनिया में आने का हक न मिले वहां उनके दूसरे मानवीय अधिकारों की बात ही बेमानी है

दरअसल बेटियों की सहज स्वीकार्यता न होने की यह स्थिति पुख्ता करती है कि हमारे समाज में विचार और व्यवहार के स्तर पर दोहरे मानक बने हुए हैं। कुछ समय पहले आई यूनिसेफ की एक रिपोर्ट के मुताबिक सुनियोजित लिंगभेद के कारण भारत की आबादी से करीब 5 करोड़ लड़कियां और महिलाएं गायब हैं। अफसोस कि बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ के नारे तो लगते हैं, पर कन्या भ्रूणहत्या जैसी कुरीतियां भी मौजूद हैं। चिंतनीय है बेटियों को गर्भ में मार डालने का कृत्य केवल आपराधिक मामला भर नहीं है। यह पूरे सामज का ताना-बाना बिगाड़ने वाली सोच है। कई प्रदेशों में बेटों को दुल्हन नहीं मिल रही है। महिलाओं के खिलाफ अपराध बढ़ने की एक वजह यह भी है।

इस समस्या का हल सरकारी अभियान और कानूनी सख्ती से ज्यादा सामाजिक सोच में बदलाव से निकल पाएगा। बेटे की चाहत ही नहीं दहेज, बढ़ते महिला अपराध, लैंगिक असमानता और सामाजिक भेदभाव भी ऐसे बड़े कारण हैं जो बेटियों की स्वीकार्यता में बाधक बनते हैं। बेटियों के साथ जन्म से पहले ही दोयम दर्जे का व्यवहार न हो इसके लिए लोगों को संवेदनशील बदलना आवश्यक है। यह लड़कियों के प्रति समाज का नजरिया बदलने में सहायक साबित होगी। यकीनन यह कुरीति सामूहिक सहभागिता और इससे जुड़े समस्त पहलुओं पर जागरूकता आने से ही दूर हो पाएगी।

(लेखिका सामाजिक मामलों की जानकार हैं)

राजनीति में नेतृत्व ही निर्णायक है

संघ के प्रयोगों से लाभ उठाती भाजपा शीर्षक से लिखे अपने लेख में बद्री नारायण ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को आधार बनाकर जिस भारतीय समाज का विश्लेषण किया है, वह विभिन्न धर्मों, पंथों और भाषा-भाषियों से समन्वित है। माना कि राजनीति में बहुल सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले समाज की आवश्यक भूमिका है, लेकिन इस समाज ने उसी का नेतृत्व स्वीकार किया जिसका आभामंडल उसके हितों को आच्छादित करने वाला रहा। भारतीय समाज की इसी विशिष्टता ने लालू, मुलायम, मायावती जैसे अनेक क्षेत्रीय नेताओं को राजनीतिक मंच दिया जिन्होंने अपने राजनीतिक आभामंडल से न केवल राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित किया, अपितु क्षेत्र विशेष पर दबदबा कायम कर अपने प्रदेश में बहुमत की सरकार बनाने में भी कामयाब हुए। इसी तरह राष्ट्रीय राजनीति में जब तक कांग्रेस पार्टी को गांधी-नेहरू परिवार का सशक्त नेतृत्व मिलता रहा तब तक केंद्र में कांग्रेस की सरकार बनती रही। 1984 में इंदिरा गांधी और बाद में उनके पुत्र राजीव गांधी की दुखद हत्या के बाद भाजपा और कांग्रेस में रस्साकसी का खेल शुरू हो गया। अपनी ईमानदार छवि से डॉ. मनमोहन सिंह ने कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी के निर्देशन में दो बार केंद्र की सरकार जरूर बनाई, लेकिन सक्षम नेतृत्व के अभाव में कांग्रेस का आभामंडल दिन-प्रतिदिन क्षीण होता गया। इसका फायदा नरेंद्र मोदी और अमित शाह के नेतृत्व वाली भाजपा को मिला और 2014 में मोदी के सक्षम नेतृत्व में पूर्ण बहुमत की केंद्र सरकार का गठन हुआ। मोदी के करिश्माई व्यक्तित्व और उनकी लोकहितैषी नीतियों के कारण उनके नेतृत्व कौशल की छाप भारतीय जनमानस पर इस कदर अंकित हुई कि 2019 में भी भाजपा ने प्रचंड बहुमत के साथ अपने दम पर केंद्र में पुनः वापसी की। लोकसभा की तीन सौ से अधिक सीटें जीतने में भाजपा के सक्षम नेतृत्व की मुख्य भूमिका है। भाजपा के बढ़ते राजनीतिक वर्चस्व का श्रेय आज भले ही उसकी मातृ-संस्था संघ के खाते में दर्ज कर दिया जाए, लेकिन हकीकत में यह प्रधानमंत्री मोदी और उनके जोड़ीदार शाह के करिश्माई नेतृत्व का ही कमाल है।

pandeyvp1960@gmail.com

मेलबाक्स

करवा चौथ का व्रत

हिंदू धर्म में 16 संस्कारों में से विवाह संस्कार मानव के जीवन का सबसे महत्वपूर्ण है। इसमें विवाह के उपरांत अलग-अलग परिवार की महिला व पुरुष संपूर्ण रूप से एक हो जाते हैं। भारतीय महिलाएं विवाह उपरांत अपने परिवार के कल्याण के लिए तरह-तरह के व्रत व पूजा आदि करती हैं। इन्हीं में एक है करवाचौथ का व्रत। इसे भारत के पंजाब, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, मध्य प्रदेश और राजस्थान में विशेष रूप से मनाया जाता है। यह कार्तिक मास की कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को मनाया जाता है। इस दिन विवाहित स्त्रियां उपवास करती हैं। यह उपवास सुबह सूर्योदय से पहले करीब 4 बजे के बाद शुरू होकर रात में चंद्रमा दर्शन के बाद संपूर्ण होता है। ग्रामीण स्त्रियों से लेकर आधुनिक महिलाएं तक सभी इसका उपवास बड़ी श्रद्धा एवं उत्साह के साथ रखती हैं। पति की दीर्घायु एवं अखण्ड सौभाग्य की प्राप्ति के लिए इस दिन भालचंद्र गणेश जी की अर्चना की जाती है। इस व्रत के पीछे भले ही कई धार्मिक मान्यताएं हैं, लेकिन इससे पति-पत्नी के संबंधों में प्रगाढ़ता आती है। ऐसे व्रत-त्योहार पश्चिमी देशों में नहीं मनाए जाते हैं। यही कारण है कि उन देशों में पति-पत्नी के रिश्ते टिकाऊ नहीं होते। उनका पारिवारिक जीवन तनावपूर्ण होता है, जबकि भारतीय परिवार स्नेहपूर्ण माहौल में जीवन व्यतीत करते हैं।

ममता, मोहन नगर, पलवल

प्रतिभाओं का पलायन

भारतीय मूल के अमेरिकी अर्थशास्त्री अभिजीत बनर्जी को इस वर्ष का अर्थशास्त्र का नोबेल मिलना यद्यपि प्रसन्नकारी है, तथापि कई प्रश्न चिन्ह भी खड़ा करता है। वे अब भारतवंशी अमेरिकी हैं। क्या यह हमारे ब्रेन ड्रेन की वास्तु स्थिति का परिचायक नहीं है? 130 करोड़ की जनसंख्या वाले इस देश में अधिकांश उच्च शिक्षित युवा विदेश की राह पकड़ लेते हैं। ऐसा नहीं कि वे राष्ट्रप्रेमी नहीं हैं, उनमें भी देश प्रेम हमारी ही तरह कूट-कूट कर भरा है। लेकिन यहां के संस्थान तथा सरकारें व वातावरण उन्हें वे सुविधाएं व संसाधन मुहैया नहीं करा पाते, जो पश्चिमी देश करा देते हैं। इन संसाधनों के बिना वे तरक्की नहीं कर पाते हैं, नोबेल तो बहुत दूर की कौड़ी है। यह विचारणीय है।

डॉ. मनोज कुमार शर्मा, स्याना, बुलंदशहर

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई–मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी–210–211, सेक्टर–63, नोएडा
ई–मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।